मनुस्मृति
[अध्याय - षष्ठ, संन्यासधर्म-विषय]

मनुस्मृति मनु महाराज द्वारा वेदानुकूल रचित मानव के लिए जीवनोपयोगी संविधान ग्रन्थ है. आचार, व्यवहार व प्रायश्चित्त से सम्बन्धित अधिकतम विषयों को इसमें समावेशित किया गया है। सम्पूर्ण शास्त्र अनुष्टुप् छन्द में ही लिखा गया है। क्योंकि मनुस्मृति एक धर्मशास्त्र है अतः इसका सम्बन्ध सर्वमान्य रूप से सभी मानवमात्र से है इसीलिए इसकी भाषा भी सरल व सुबोधगम्य है, वैदिक संस्कृत न होकर सरल लौकिक संस्कृत का प्रयोग इसमें किया गया है।

आज हम मनुस्मृति के षष्ठ अध्याय में वर्णित संन्यास धर्म विषयक कुछ आग्रिम सिद्धान्तों पर चर्चा करेंगे।

प्रसङ्ग -

संन्यास ग्रहण करने के उपरान्त अपने से भिन्न की अपेक्षा न रखते हुए एकाकी विचरण के सम्बन्ध में कहा गया है।

पद्य (1) - एक एव चरेन्नित्यं सिद्ध्यर्थमसहायवान्।
सिद्धिमेकस्य संपश्यन्न जहाति न हीयते ॥6।4२॥

पदच्छेद -

चरेन्नित्यम् - चरेत् + नित्यम्, यरोऽनुनासिके॰ से अनुनासिक होकर चरेन्नित्यम्।
सिद्ध्यर्थम् + असहायवान् = सिद्ध्यर्थमसहायवान्
सिद्धिम् + एकस्य = सिद्धिमेकस्य
संपश्यन् + न = सम्पश्यन्न।

अर्थ - (एकस्य सिद्धिम् संपश्यन्) अकेले एक व्यक्ति की, सिद्धि= मोक्ष रूपी साधना को देखते हुए, मोक्ष का मार्ग, साधना का क्षेत्र, सिद्धि का मार्ग आप कुछ भी कह लीजिए, इसे साधक, संन्यासी, योगी व्यक्ति अकेले का मार्ग, एकाकी मार्ग, समझते हुए "एकला चलो" वाला मार्ग है ये, सांसारिक सामाजिक कार्यों के लिए प्रत्येक व्यक्ति को दूसरे की आवश्यकता है, शरीर संरक्षण के लिए भी आपको दूसरे की अपेक्षा है, संन्यासी भी शरीररक्षा अन्यों के सहयोग के बिना नहीं कर सकता, पर जब बात भीतर घुसने की हो, शान्ति की हो, समाधि की हो, संस्कार जो अविद्यायुक्त हैं उन्हें क्षीण करने की हो, या विद्यायुक्त संस्कारों को प्रसुप्त से उदार अवस्था में

लाने की हो, अथवा समाधि की विभिन्न अवस्थाओं की हो तो व्यक्ति को भीतर तो अकेले ही जाना पड़ता है।

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।

यह वेद का आदेश है संगठन से जीने का विधान है आदेश है क्योंकि बिना संगठन के किसी कार्य में सफलता प्राप्त करना असम्भव है, बड़ी से बड़ी बाधाओं को समूह ने तहस नहस कर दिया, ऐसे उदाहरण सर्वत्र भरे पड़े हैं।

पर यदि आपको अध्यात्म में उतरना है आत्मनः समीपम् अध्यात्मम्, अपनी खोज करनी है स्वयं को जानना है तो व्यक्ति को समझ लेना चाहिए कि यह मेरे भीतर की यात्रा है यहाँ तो प्रभु के बिना सभी की नो एंट्री है। इसीलिए व्यक्ति के मन में बड़े गहरे भी राज छुपे हों तो क्या कोई दूसरा व्यक्ति उसकी इच्छा के बिना उससे निकलवा सकता है? कदापि नहीं, अन्तःकरण की भावनाओं को मैं जानता हूँ ईश्वर जानता है अथवा ईश्वर भक्त कुछ अंशों में जान सकता है क्योंकि उसने स्वयं को साक्षी भाव से देखा है इसलिए वह आपको भी पढ़ सकता है। इसीलिए संन्यासी की स्थिति को परिपक्व किया जा रहा है, एकस्य सिद्धिम् संपश्यन्, इस साधना पथ पर अकेले की सिद्धि को जानते हुए किसके लिए? (सिद्धयर्थम्) मोक्ष की प्राप्ति के लिए (नित्यम् असहायवान्) नित्यप्रति, किसी के सहारे या आश्रय की इच्छा न रखते हुए (एकः एव चरेत्) अकेला ही विचरण करे। कौन से सहारे की अपेक्षा न रखे, जिन्होंने अब तक सहारा दिया बाह्य बाधाओं, समस्याओं, दुर्घटनाओं में हमें निकालने में सहयोग दिया था, मित्रों ने, बन्धु-बान्धवों ने, पत्नी-पुत्रादि, माता-पिता आदि ने गुरुओं व आचार्यों ने जो सम्बल दिया था वह भीतर काम नहीं आता। इन्टरव्यू जहाँ होना हो वहाँ तक सब सहयोग देते हैं पर ऑफिस में तो मात्र आपको अकेले प्रवेश करना पड़ता है। शरीर को चिता तक तो सब पहुँचा देते हैं पर चिता पर तो अकेले ही होना पड़ता है, इसी प्रकार से बाहर के कार्यों में बाहर वाले सहयोग देते हैं पर भीतर घुसने पर बाहर वाले नहीं, भीतर वाले ही सहयोग करते हैं, परमात्मा के सान्निध्य से आप भीतर के संस्कारों का परिवर्तन कर सकते हो, क्लेशों से हट सकते हो, साक्षी व द्रष्टा हो सकते हो जिस व्यक्ति ने इतनी साधना कर ली (न जहाति न हीयते)

Scanned with CamScanner

न तो वह किसीको छोड़ता है और न मेरे उसे छोड़ता है, अर्थात् वह मोह रहित हो जाता है, अब ऐसी स्थिति जिस व्यक्ति ने बनाली वह मृत्यु के समय, खरबूजे की तरह डाल से छूटने की तरह ही छूट जाता है। जब खरबूजा पक जाता है तो बेल से स्वयं अलग हो जाता है -

"उर्वारुकमिव बन्धनात् मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्"॥

जब फल कच्चा होता है तो बालक ढेला मार मारकर फलों को तोड़ते हैं, खींचकर तोड़ते हैं, पर जब वही फल पक जाता है तो स्वयमेव डाली को छोड़ देता है, उसी प्रकार जो व्यक्ति, साधक, साधनापथ पर अपनी स्थिति को दृढ़ कर लेता है, अन्तर्यात्रा करने के लिए एकाकी तैयार हो जाता है वह व्यक्ति न किसी को छोड़ता है और न उसे कोई छोड़ता है।

भावार्थ -

'सूर्य एकाकी चरति' के भाव को इस पद्य में मनु ने संन्यासी के लिए परिभाषित किया है, मानो वेद के इस मन्त्र को संन्यासी अपने जीवन से चरितार्थ करे। संन्यासाश्रम में कहीं किसी की अपेक्षा न करते हुए अन्तर्मन में एकाकी उतरे, जिससे उसे संसार से जाते समय कोई भी व्याकुलता, अशान्ति बेचैनी न हो।

प्रसङ्ग - इस पद्य में बताया गया है कि संन्यासी अपनी सामान्य आवश्यकताओं की पूर्ति निर्लिप्त भाव से गांव में जाकर भिक्षा पूर्वक करे।

पद्य (2)

अनग्निरनिकेतः स्यात् ग्राममन्नार्थमाश्रयेत्।
उपेक्षकोऽसंकुसुको मुनिर्भावसमाहितः॥6।43॥

पदच्छेद - अनग्निरनिकेतः - अनग्निः + अनिकेतः - स सुपो रुः
ग्राममन्नार्थमाश्रयेत् - ग्रामम् + अन्नार्थम् + आश्रयेत् - "
उपेक्षकोऽसंकुसुको-मुनिः - उपेक्षकः + असंकुसुकः + मुनिः
अतो रोरप्लुतादप्लुते - अप्लुत अकार से परे रेफ को उकार हो, अप्लुत अकार परे रहते उपेक्षक उ असंकुसुकः, आद् गुणः गुणैकादेश उपेक्षको+असं., एङः पदान्तादति - पूर्वरूप एकादेश होकर उपेक्षकोऽसंकुसुकः + मुनिः, यहाँ हशि च से हश् प्रत्याहार परे रहते विसर्ग को उकार आगे पूर्ववत् आद् गुणः से गुणैकादेश उपेक्षकोऽसंकुसुको मुनिः।

Scanned with CamScanner

अर्थ - वह संन्यासी (अनाग्निः) अग्नि से रहित, न अग्निः अनाग्निः, संन्यासी जब संन्यास आश्रम की दीक्षा ग्रहण करता है उसके बाद उसकी शिखा, उसका यज्ञोपवीत, व उसका यज्ञ छूट जाता है ये चिह्न तभी तक धारण करता है जब तक वह संन्यासी नहीं होता, यदि वह संन्यास की दीक्षा ग्रहण नहीं करता तो ये सभी चिह्न व कार्य उसके देह की समाप्ति के साथ ही समाप्त होते हैं -

जरया वा एतस्मान् मुच्यते मृत्युना वा

इसीलिए मनु महाराज ने कहा कि अनग्निः अग्निरहितः, जो स्वयं अग्निमय, ज्ञानमय, प्रकाशमय हो चुका है ऐसा संन्यासी बाह्य अग्नि का अब क्या करेगा? अतः वह अनाग्निः हो गया है (अनिकेतः) निकेतन घर को कहते हैं पर संन्यासी अ+निकेतः घर से रहित है क्योंकि घर में है, मोह में है तो बन्धु बान्धवों का भय है; पर संसार ही जिसका घर हो गया है

वसुधैव कुटुम्बकम्

उसे अब किस चीज का भय

यस्मिन्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः।
तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः॥ यजु।
॥ ५०।७॥

जिसे सबमें वही दिखाई देता है, उसमें सब दीखते हैं अब उसे न मोह है, न शोक है, अब वह संसार के लिए विश्वकल्याण की भावना से निर्भय होकर कार्य कर सकता है जहाँ ठहरा वहीं उसका निवास हो गया इसीलिए संन्यासी को अनिकेतः, (अन्नार्थं ग्रामम् आश्रयेत्) और जब भूख लगे तो गांव का आश्रय लेवे, (उपेक्षकः) उपेक्षा करता हुआ, किसकी?

मैत्रीकरुणामुदितोपेक्षाणां सुखदुःखपुण्यापुण्य-
विषयाणां भावनातश्चित्तप्रसादनम्। योग०

चित्त की प्रसन्नता के लिए चार प्रकार के मनुष्यों के साथ ५ प्रकार का व्यवहार पतञ्जलि ऋषि ने योग दर्शन में बताया है जिसमें सुखी व्यक्ति के साथ मैत्री, दुःखी के प्रति करुणा, पुण्यात्मा के प्रति मुदिता तथा पापात्मा के प्रति उपेक्षा का व्यवहार कहा है। दुष्ट व्यक्ति के प्रति न दोस्ती न वैर, उपेक्षा कही है। यही व्यवहार संन्यासी के लिए भी कहा है। (असंकुसुकः मुनिः भावरहितः स्यात्) असंकुसुकः अर्थात् स्थिरमतिः, स्थिरबुद्धि, अपनी बुद्धि में स्थैर्यता रखने वाला

Scanned with CamScanner

हो, चांचल्य रहित, मुनिः मननात्, मनन करने के कारण से मुनि.

विद्या प्राप्ति के चार कर्म भी हैं –

श्रवण, मनन, निदिध्यासन, साक्षात्कार

[व्यवहारभानुः महर्षि दया.]

मनन उसको कहते हैं जो जो शब्द, अर्थ और सम्बन्ध आत्मा में एकत्र हुए हैं उनका एकान्त में स्वस्थचित्त होकर विचार करना। और जो उपर्युक्त प्रकार से मनन करता है उसे मुनि कहते हैं यहाँ संन्यासी को भी मुनि कहा है। तीसरा विशेषण है भावसमाहितः भावेन ब्रह्मणि समाहितः तद् एकतानमना अरण्ये च दिवारात्रौ वसन् [मन्वर्थमुक्तावली टीका]

अपने भाव से ब्रह्म में जो समाधिस्थ है कैसे, एकाग्रमन से, कहाँ? अरण्य= जंगल में, कब? दिन और रात्री में अर्थात् जो अपने भावों को दिन-रात, जंगल में निवास करते हुए एकाग्रमन होकर ब्रह्म में ही लगाता है ऐसा भावसमाहित योगी विचरण करे।

भावार्थ – संन्यासी, भौतिक यज्ञाग्नि से रहित, अपने गृहस्थ रूपी गृह से रहित, दुष्ट मनुष्यों की उपेक्षा करने वाला, स्थिरमति वाला, मननशील, ब्रह्म में ही अपने मनादि पदार्थों को सदैव रखने वाला, भिक्षा के लिए गांव में विचरण करे।

सन्दर्भ: – जीवन व मरण दोनों के प्रति अपनी दृष्टि को समान रखने वाला संन्यासी हो, यह विषय इस पद्य में दिया गया है –

पद्य-③ नाभिनन्देत मरणं नाभिनन्देत जीवितम्।
कालमेव प्रतीक्षेत निर्देशं भृतको यथा॥6।45॥

अर्थः – (न जीवितम् अभिनन्देत) न तो जीता हुआ खूब प्रसन्न होवे, जो भी व्यक्ति जिस परिस्थिति में खूब आनन्दित होता है उससे विपरीत में उतनी ही मात्रा में दुःखी व परेशान भी होता ही है, यह नियम है परमात्मा का यदि कहीं आकर्षण है तो उससे विपरीत में विकर्षण भी होगा ही, कहीं राग है तो कहीं द्वेष भी होगा ही, इसीलिए इन्हें द्वन्द्व कहा गया, जोड़े हैं एक है दूसरा भी हमारे अन्दर होता है, एक को निकालो दूसरा भी निकलेगा ही, इसी बात को कुछ भिन्नता से श्री कृष्ण भगवान् भी कहते हैं –

यः सर्वत्रानभिस्नेहस्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभम्।
नाभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥2।57॥

Scanned with CamScanner

न अभिनन्दति; न द्वेष्टि, जो पुरुष मोह रहित होकर उस उस शुभ व अशुभ को प्राप्त करके न तो हर्षित होता है और न ही दुःखी होता है उसी की बुद्धि स्थिर होती है. यहाँ भी यही कहा जो जीवन में आनन्दित नहीं होता, अच्छी परिस्थिति आने पर फूल के गुप्पा नहीं होता तथा (न मरणम् अभिनन्देत) और न ही मरण में दुःख का अनुभव करता है.

सिद्धयसिद्धयोः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते ।2।48।।

इस प्रकार दोनों परिस्थितियों में जो समान रहता है। यहाँ पद्य में उपलक्षण मात्र लिया गया है इस प्रकार के सभी द्वन्द्वों में, हर्ष-शोक, जय-पराजय, हानि-लाभ, सुख-दुःख तथा जन्म-मरण आदि में जो न प्रसन्न होता, न दुःखी होता है अपनी दृष्टि को समान बनाकर रखता है जैसे मर्यादा पुरुषोत्तम के लिए लिखा गया है -

आहूतस्याभिषेकाय विसृष्टस्य वनाय च।
न मया लक्षितस्तस्य स्वल्पोऽप्याकारविभ्रमः।।
[महर्षि वशिष्ठ

जब उन्हें राज्याभिषेक के लिए बुलाया गया और जब वन के लिए भेजा गया दोनों ही स्थितियों में उनके मुखमण्डल पर थोड़ा भी अन्तर नहीं था, दोनों ही स्थितियों में एक समान थे इसी भाव को भर्तृहरि ने भी स्पष्ट किया है -

उदेति सविता ताम्रस्ताम्र एवास्तमेति च।
सम्पत्तौ च विपत्तौ च महतामेकरूपता ।।

जिस प्रकार सूर्य जैसा उदय के समय होता है वैसा ही अस्त होते समय भी रहता है यही महानपुरुषों की महानता होती है, कि सूर्य की भांति दोनों ही परिस्थितियों में समान रहते हैं। इसी बात को यहाँ भी मनु महाराज ने संकेत से कहा है कि जीवन के समय अधिक आनन्दित न हो और मरण समय उदास भी नहीं होना है अपितु ऐसी स्थिति आने पर (यथा) जैसे (भृतकः निर्देशम् प्रतीक्षेत) सेवक अपने वेतन के निर्देश की प्रतीक्षा करता है वैसे ही "यत्तदोर्नित्य सम्बन्धः" संन्यासी भी (कालः प्रतीक्षेत) अपने मृत्यु के काल की प्रतीक्षा करे, उसे न लाने की इच्छा करे, न हटाने की इच्छा करे।

भावार्थ – सभी द्वन्द्वात्मक स्थितियों में स्थितप्रज्ञ की भांति शान्त रहते हुए, शैवक की भांति अपने आने वाले समय की प्रतीक्षा करें।

प्रसङ्ग – कैसे अपने शरीर व अन्तःकरण की पवित्रता को बनाये रखना चाहिए, इस विषय को इस श्लोक में उद्धृत किया गया है।

पद्य – (4)

दृष्टिपूतं न्यसेत्पादं वस्त्रपूतं जलं पिबेत्।
सत्यपूतां वदेद्वाचं मनःपूतं समाचरेत्॥ 6।46॥

अर्थ –

संन्यासी गृहत्याग कर चुका है तो उसे अपने मार्ग में किन किन बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिए (दृष्टिपूतं न्यसेत् पादम्) दृष्टि को पवित्र करके पैरों को रखे, अर्थात् आखों का ध्यान रखेगा तभी आंखों से सम्यक् दर्शन कर पायेगा, आखों की पवित्रता दो प्रकार से देखी जा सकती है एक बाह्य नेत्र रूपी गोलक की शुद्धता, दूसरी हमारी दृष्टि कुदृष्टि न हो संन्यासी के लिए हर स्त्री मातृवत् हो गई है प्रत्येक पुरुष पितावत् या पुत्रवत् हो गया है, अब सब मेरे हैं क्योंकि सब मेरे (परमात्मा) के मेरे हैं –

अयं निजः परोवेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्॥

देखने से प्रतीत होता है शारीरिक नेत्र की पवित्रता की चर्चा ही यहाँ की गई है। यदि सही तरीके से देख के नहीं चलेगें तो अनेक प्रकार के कष्टों का सामना करना पड़ेगा, उसी के लिए सावधानी पूर्वक चलने का निर्देश दिया है, (वस्त्रपूतं जलं पिबेत्) जल पीए पर वस्त्र से छानकर, स्वाभाविक है मार्ग में चलते हुए प्यास अवश्य लगे, उसके लिए भी सावधानी रखे। (सत्यपूतां वाचं वदेत्) सत्य से पवित्र की हुई वाणी का ही प्रयोग करे, असत्य भाषण कभी न करे, किसी भी परिस्थिति में न करे

सत्यं यथार्थे वाङ्मनसे। यथा दृष्टं यथानुमितं
यथा श्रुतं तथा वाङ्मनश्चेति।

[योगदर्शन-2।30]

बहुत सुन्दर परिभाषा महर्षि पतञ्जलि ने दी है उसका पालन करता हुआ सत्य वाणी का प्रयोग करे। (मनःपूतं समाचरेत्) मन की पवित्रता से जीवन में सभी आचरण करे।

Scanned with CamScanner

मन यदि पवित्र है तो सभी कार्यों में पवित्रता स्वतः आ जायेगी, क्योंकि आत्मा मन के माध्यम से जुड़कर ही इन्द्रियों से सम्पर्क साधता है और उन्हें पूर्ण करता है, मूल ही ठीक है तो आगे सब ठीक होना सहज होता है, यदि मूल में भूल है तो आगे सब बिगड़ता चला जायेगा, अतः अन्त में मन की पवित्रता पर बल दिया गया है।

"मन यदि चंगा है तो कठौती में ही गंगा है"

भावार्थ –

चार बातों पर उपर्युक्त में ध्यान दिलवाया गया है दृष्टि से पवित्र हो पैरों को मार्ग में रखे, इधर उधर व्यर्थ में न देखे, जल को सदैव छानकर ही पीये, सत्यवाणी ही बोले तथा मन पवित्र करके अपने सभी व्यवहारों में पवित्रता रखे।

Scanned with CamScanner